नववर्ष की शुभकामना

के साथ करें

"दुःख-संयोग का वियोग"

पंक्ति संख्या

श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय सं० ६ के श्लोक सं० २३ में भगवान् कहते हैं -

तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसञ्ज्ञितम्। स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा।।

अर्थात् 'जो दुःखरूप (संसार के) संयोग से रहित है, उसको जानना चाहिये। उसी का नाम "योग" है। उस योग को न उकताये हुए चित्त, अर्थात् धैर्य और उत्साहयुक्त चित्त से, दृढ़ निश्चय करके जानना तथा करना ही (मनुष्य का) कर्त्तव्य है।' ५

इस श्लोक में भगवान् ने 'योग' की परिभाषा दी है कि दुःख-संयोग से वियोग हो जाना ही 'योग' है। इसे भली प्रकार समझकर हृदयंगम करने से मनुष्य सब प्रकार के दुःखों से मुक्त हो जाता है।

योगसञ्ज्ञितम् दुःखसंयोगवियोगं - यहाँ 'दुःखसंयोग' उस **नासमझी** का वाचक है, जिसके कारण नित्य मिटते हुए एवं स्वतः स्पष्ट शरीर सम्बन्धी पारिवारिक सम्बन्धों, धन-सम्पत्ति आदि वस्तुओं, पद-प्रतिष्ठा आदि परिस्थितियों एवं दाम्पत्य-सुख आदि अनुभवों को मनुष्य सदैव स्थिर रहने १० वाला मान बैठता है। **यह नासमझी ही मनुष्य के दुःखों का कारण है।** यह सभी का अनुभव होगा कि इन भोगों के अर्जित करने में भी दुःख, संरक्षण में भी दुःख और नष्ट होने पर तो दुःख ही दुःख हाथ लगता है। इस नासमझी से वियोग कर लेना ही 'योग' है। यह योग उस परमात्म-सत्ता के साथ होता है जो **सदैव है तथा सदैव रहेगा।** ऐसा होने पर धर्मसंगत, शास्त्र-विहित कर्मों में उन नित्य परिवर्तनशील सांसारिक संयोगों का केवल उपयोग होता है। इन कर्मों को **स्वार्थ-रहित एवं** १५ **अहंकार-रहित भाव से** सम्पन्न कर मनुष्य अक्षय सुख की प्राप्ति करता है। इस अक्षय सुख का विस्तार से उल्लेख इसी अध्याय के श्लोक सं० २० से २२ में भगवान् ने स्पष्टतया किया है।

तं विद्यात् अर्थात् 'उसे जानना चाहिये' **-** यह पद आदेश-वाक्य है। इसे भगवान् की आज्ञा समझना चाहिये, क्योंकि इसे ही करना मनुष्य जीवन का लक्ष्य है और इसी के लिये जीव को भगवान् की कृपा से मनुष्य-शरीर मिलता है। इसे न करने से मनुष्य सदैव एक के बाद एक दुःख में फंसा रहता २० है।

स निश्चयेन योक्तव्यो - इस योग को सिद्ध करने के लिये दृढ़ निश्चय आवश्यक है, जो बुद्धि के व्यवसायात्मिका होने पर ही हो सकता है। इसके लिये भोग और ऐश्वर्य आदि अनित्य किन्तु भ्रम-पूर्वक माने हुए सांसारिक सुखों की ओर से मन को दृढ़तापूर्वक हटा लेना चाहिये (गीता २/४४)। यह पद भी आदेश-वाक्य है। २५

योगोऽनिर्विण्णचेतसा - भगवान् भली प्रकार जानते हैं कि योग सिद्ध करने के आरम्भ में मनुष्य जिस उत्साह और उल्लास से लगता है, कुछ दिन बाद वह उससे उकताने भी लगता है। इसलिये इस पद में भगवान् चेतावनी देते हैं कि ऐसा होने पर उसके निश्चय की दृढ़ता ही उसके काम आयेगी। इसके लिये नित्य स्वाध्याय तथा सत्संग की आवश्यकता है। अन्यथा भ्रमपूर्ण सांसारिक मान्यताओं के तीव्र वेग से मनुष्य का चित्त हिलने लगता है। इसलिये भगवान् ने इस सावधानी को दृढ़तापूर्वक ३० रेखांकित किया है।